Research Reinforcement | A Peer Reviewed International Refereed Journal | ISSN 2348-3857
Vol. 13, Issue 2 | November 2025 - April 2026 | pp. 6-9

परिवर्तनशील समाज में मौलिक अधिकार एवं कर्तव्यों का अंतर्संबंध : एक समीक्षात्मक विश्लेषण

डॉ. अखौरी मनीषा सिन्हा

राजनीति विज्ञान विभाग, कोल्हान विश्वविद्यालय, चाईबासा (झारखण्ड)

शोध सारांश

महात्मा गाँधी ने कहा था कि, "जीवन जीने का अधिकार हमें तभी मिलता हैं, जब हम दुनिया के नागरिक होने का कर्तव्य निभाते हैं।" निसंदेह गाँधी जी का यह कथन शत-प्रतिशत सत्य है, क्योंकि अधिकार तथा कर्तव्य एक-दूसरे के पूरक हैं और एक समाज को सुचारु रूप से कार्य करने के लिए अधिकार एवं कर्तव्य के बीच संतुलन बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है, यह संतुलन व्यक्तिगत तथा सामाजिक जिम्मेदारी के बीच एक सांमजस्यपूर्ण संबंध सुनिश्चित करता है। जहाँ अधिकार व्यक्ति को सशक्त बनाते है वही कर्तव्य उन्हें समाज के प्रति जवाबदेह बनाते हैं। अधिकार हमें गरिमा और सम्मान के साथ जीवन जीने का अवसर देते हैं। संविधान द्वारा बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक व्यक्ति के लिए समानता, सम्मान, राष्ट्रहित और राष्ट्रीय एकता को समाहित किया जाता है। जैसा कि हम सभी जानते है कि भारतीय संविधान विश्व के सबसे व्यापक संविधानों में से एक है जो न केवल अपने नागरिकों को मौलिक अधिकार देता हैं बल्कि उन पर कुछ मौलिक कर्तव्यों का पालन करने की भी अपेक्षा रखता है। यही अधिकारों और कर्तव्यों का संतुलन भारतीय लोकतंत्र की नींव हैं, जो यह सुनिश्चित करता है कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता राष्ट्रीय हित के साथ सामंजस्य में रहे। क्योंकि आज के गतिशील तथा परिवर्तनशील युग में हमारे अधिकारों की सुरक्षा एवं भविष्य को सुनिश्चित करना सर्वोपरि हैं, क्योंकि समाज में अभी भी भेदभाव और असमानताएं व्याप्त हैं जिसके परिणामस्वरूप हिंसा और संघर्ष हमारे अधिकारों के लिए खतरा पैदा करते हैं, विशेष रूप से कमजोर समूहों के लिए।

संकेताक्षर—*सांमजस्य, राष्ट्रहित, असमानताएं, सम्मानजनक, परिवर्तनशील, संविधान*

प्रस्तावना

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारतीय संविधान अपनी 75वीं वर्षगांठ मना रहा है। इस संदर्भ में निःसंदेह गाँधी जी का यह कथन शत-प्रतिशत सत्य है, क्योंकि अधिकार तथा कर्तव्य एक-दूसरे के पूरक हैं और एक समाज को सुचारु रूप से कार्य करने के लिए अधिकार एवं कर्तव्य के बीच संतुलन बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है, यह संतुलन व्यक्तिगत तथा सामाजिक जिम्मेदारी के बीच एक सामंजस्यपूर्ण संबंध सुनिश्चित करता है। जहाँ अधिकार व्यक्ति को सशक्त बनाते हैं वही कर्तव्य उन्हें समाज के प्रति जवाबदेह बनाते हैं, क्योंकि अधिकार रहित मानव जीवित नहीं रह सकता तथा अपने कर्तव्यों को नहीं समझ सकता, क्योंकि अधिकार वह सशक्त क्षमता हैं जिसके आधार पर ही एक व्यक्ति अपने कर्तव्यों का पालन करने में सक्षम हो सकता है। सामान्यतः यह कहा जाता हैं कि अधिकार की सृष्टि समाज द्वारा होती हैं, राज्य द्वारा नहीं। राज्य तो केवल अधिकारों को मान्यता प्रदान करता है। समाज के द्वारा केवल ऐसी ही माँगों को स्वीकारता है जो आवश्यक हैं तथा जिनमें सार्वजनिक कल्याण की भावना निहित हो, क्योंकि अधिकार एवं कर्तव्य दो पहिये हैं जिनके आधार पर ही सामाजिक शांति और सुव्यवस्था बनी रह सकती हैं। अर्थात ये दोनों एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। जहाँ अधिकार हैं वहाँ कर्तव्य भी हैं। उदाहरण के लिए, यदि मुझे जीवन जीने का अधिकार

हैं तो दूसरे व्यक्तियों का यह कर्तव्य हैं कि वे मेरे जीवन पर आक्रमण न करें और जीवन के अधिकार को बना रहने दें।[1]

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

इतिहास में मानव के अधिकार का प्रमाण 'मैग्नाकार्टा' के रूप में पाया जाता है। 17वीं एवं 18वीं शताब्दी में दार्शनिकों का यह प्रमुख तर्क था कि व्यक्ति के अधिकार प्रकृति प्रदत्त हैं। जर्मन दार्शनिक कांट ने मानवीय गरिमा के संबंध में कहा है कि, "प्रत्येक चीज का या तो मूल्य होता हैं या गरिमा। जिसका मूल्य होता है, उसकी जगह उसके समतुल्य कोई अन्य चीज भी रखी जा सकती है। इसके विपरीत, जो तमाम मूल्यों से ऊपर हो और जिसका कोई समतुल्य न हो, उसकी गरिमा होती हैं।"[2] जिसका तात्पर्य है कि अन्य प्राणियों से भिन्न व्यक्ति की एक गरिमा होती है, जिसके चलते व्यक्ति अपने आप में बहुमूल्य है। इस दृष्टि से सभी व्यक्ति एक समान हैं और कोई भी किसी का दास बनने के लिए पैदा नहीं हुआ हैं। सभी व्यक्तियों को स्वतंत्र रहने तथा अपनी पूरी संभावनाओं को साकार करने हेतु समान अवसर उपलब्ध होना चाहिए।

वस्तुतः मनुष्य के अधिकारों के संरक्षण का मूल भारत के वैदिक काल के धर्म से ही पाया जाता है। भर्तृहरि, वात्स्यायन, कौटिल्य के ग्रंथों में भी मानवाधिकारों को मनुष्य का स्वाभाविक गुण-धर्म बतलाया गया है। बुद्ध, महावीर, कबीर, गुरुनानक आदि के संदेश भी हमें मानवीय मूल्यों और अधिकारों की रक्षा का संदेश देते हैं। अशोक से लेकर अकबर तक अनेक भारतीय सम्राटों ने मानव के अधिकारों को पोषित किया।

अधिकारों के इसी तर्क पर मानव-अधिकार संबंधी संयुक्त राष्ट्र घोषणा-पत्र (10 दिसंबर 1948) का निर्माण हुआ हैं। अतः अधिकार व्यक्ति की गरिमा बनाए रखने तथा उसके बेहतर जीवन-स्तर के लिए आवश्यक हैं तथा ये समाज व्यक्तियों को उनकी दक्षता एवं प्रतिभा विकसित करने में सहयोग करते हैं।

संवैधानिक प्रवाधान

संविधान के भाग (III) में मौलिक अधिकार एवं भाग IV(A) में मूल कर्तव्य की व्याख्या की गई है। संविधान द्वारा बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक व्यक्ति के लिए मूल अधिकारों के संबंध में गारंटी दी गई है। इनमें प्रत्येक व्यक्ति के लिए समानता, राष्ट्रहित और राष्ट्रीय एकता को समाहित किया गया है। मूल अधिकारों का तात्पर्य राजनीतिक लोकतंत्र के आदर्शों की उन्नति से है। ये अधिकार देश में व्यवस्था बनाए रखने एवं राज्य के कठोर नियमों के विरुद्ध नागरिकों की आजादी की सुरक्षा करते हैं, चूँकि संविधान द्वारा गारंटी तथा सुरक्षा देने के कारण इसे मूल अधिकार कहा गया है। ये मूल इसलिए भी हैं क्योंकि ये व्यक्ति के चहुँमुखी विकास अर्थात भौतिक, बौद्धिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक के लिए आवश्यक हैं।

मूल रूप से संविधान ने सात मूल अधिकार प्रदान किये थे, जिनमें संपत्ति के अधिकार को मूल अधिकारों की सूची से हटा दिया गया तथा वर्तमान समय में कुल छः अधिकार दिए गए हैं जिनमें प्रमुख हैं—

"समता का अधिकार (अनुच्छेद 14-18)

स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 19-22)

शोषण के विरूद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23-24)

धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 25-28)

संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार (अनुच्छेद 29-30)

सांविधानिक उपचारों का अधिकार (अनुच्छेद 32)"[3]

संविधान के भाग IV(A) में मौलिक कर्तव्यों की व्याख्या की गई है जिसके अंतर्गत नागरिकों के लिए "संविधान के अनुच्छेद 51(क) में 11 मौलिक कर्तव्य का उल्लेख किया गया है।"[4]

संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा घोषित मानवाधिकार घोषणा-पत्र के अनुच्छेद 29 में कहा है कि, "समाज के प्रत्येक व्यक्ति के कुछ ऐसे कर्तव्य हैं जिनसे उसके व्यक्तित्व का स्वतंत्र एवं पूर्ण विकास संभव है। अपने अधिकारों एवं अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं का उपभोग करने में प्रत्येक व्यक्ति को उन सीमाओं के रहना होगा, जो कानून द्वारा इस उद्देश्य से निर्धारित की गई हैं कि दूसरों के अधिकारों और स्वतंत्रताओं का अपेक्षित सम्मान एवं प्रतिष्ठा हो सके तथा लोकतांत्रिक समाज में नैतिकता, सार्वजनिक शांति एवं जन-कल्याण हेतु समुचित आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।"[5] वास्तव में अधिकार एवं कर्तव्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा।

अंतरराष्ट्रीय उद्घोषणा में कुछ प्रमुख अनुच्छेद हैं—

"व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता, सुरक्षा का अधिकार (अनुच्छेद 3)

समानता का अधिकार (अनुच्छेद 32)

सांविधानिक उपचारों का अधिकार (अनुच्छेद 8)

विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (अनुच्छेद 19)"[6] आदि।

ISSN 2348-3857

मौलिक अधिकार एवं कर्तव्य का समीक्षात्मक अध्ययन

लॉस्की ने कहा था कि, "अधिकार सामाजिक जीवन की वे परिस्थितियाँ हैं जिनके बिना साधारणतः कोई मनुष्य अपना पूर्ण विकास नहीं कर सकता।"[7]

हमारे भारत की संस्कृति है—"सर्वे भवन्तु सुखिनः" परन्तु इसके बावजूद वर्तमान समय में यदि अधिकार एवं कर्तव्य का समीक्षात्मक अध्ययन या प्रासंगिकता देखा जाए तो यह ज्ञात होता है कि अधिकांश व्यक्ति अपने कर्तव्य को भूल गए हैं, क्योंकि अखबार के माध्यम से या फिर अपने आस-पास महिलाओं, छोटे-छोटे नौनिहाल, अल्पसंख्यकों, मजदूर तथा समाज में हाशिए पर जी रहे व्यक्तियों को उनके अनेक अधिकारों से वंचित किया जाता है। जिसके परिणामस्वरूप मासूम बच्चे घर, गलियों व सड़कों पर कार्य करते हुए पाए जाते हैं। परिवार में महिलाओं को 'दोयम दर्जे' का समझा जाता हैं तथा कार्यस्थल पर दुर्व्यवहार किया जाता है।

यद्यपि हमारे संविधान में मौलिक अधिकार एवं कर्तव्य दोनों की व्याख्या किया गया है, परन्तु इसके बावजूद भी हमारे देश में मानवाधिकार हनन की समस्या में वृद्धि हो रही है। जिसका प्रमुख कारण हैं—सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक पिछड़ापन, क्योंकि भारत की अधिकांश जनता निरक्षर एवं गरीबी रेखा के नीचे है, जो अपने अधिकारों के लिए जागृत नहीं है।

सामान्यतः यह कहा जाता है कि एक व्यक्ति का अधिकार दूसरे व्यक्ति का कर्तव्य होता है, परन्तु वर्तमान परिदृश्य के संदर्भ में यह सिद्ध नहीं होता है, जिसे हम निम्न बिन्दु के रूप में देख सकते हैं—

- महिलाओं के साथ हिंसा एवं उनका यौन-शोषण अत्यंत ही निंदनीय है हमारे सभ्य समाज में, आज भी पुत्र की चाह में कन्या-भ्रूण हत्या हमारे समाज में विद्यमान है। इसके साथ ही लड़कियों के पालन-पोषण तथा शिक्षा में भेदभाव एवं उनकी शादी की प्राथमिकता भी एक अमानवीय कृत्य है।
- दलितों की स्थिति आज भी अच्छी नहीं है, क्योंकि ये लोग सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। जिसके परिणामस्वरूप उनके बच्चे भी अपने अधिकारों से वंचित रह जाते हैं, हालांकि सरकार प्रयासरत है कि उन्हें उचित शिक्षा एवं उचित पालन-पोषण प्राप्त हो।
- महिलाओं एवं बच्चों का अवैध व्यापार और तस्करी आज की प्रमुख समस्याओं में से है। आज भी बच्चे यातना, बालश्रम, हिंसा, गरीबी, बंधुआ मजदूरी एवं यौन उत्पीड़न जैसी समस्याओं के शिकार हैं। इसके साथ ही समाज के कमजोर वर्गों के बच्चों का कुपोषण भी चिंता का विषय है।
- आज हमारा सामाजिक परिवेश आतंकवाद से पीड़ित है। जो मनुष्य की शांति एवं सुरक्षा के अधिकार को खंडित कर एक गंभीर खतरा बनी हुई है।
- हमारे देश के रक्षक यानी पुलिस बल जो मानवाधिकारों का पोषक है, आज असंवेदनशील बना हुआ है। समाज के कमजोर वर्गों के साथ उन का क्रूर व्यवहार से सभी परिचित है। पुलिस हिरासत में मौत मानवाधिकार का घोर उल्लंघन है।
- पर्यावरण प्रदूषण भी आज मानवाधिकारों के घोर उल्लंघन का जीता-जागता उदाहरण है। प्रदूषण के कारण नदियाँ, खेत, जंगल तक प्रभावित हो रहे हैं। हम जिस वातावरण में हैं वह पूरी तरह से प्रदूषित हैं, जो हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत बड़ी चुनौती है। प्रदूषित जल, वायु, ध्वनि ये सभी हमारे मानवाधिकार का हनन ही तो है। वायु प्रदूषण के कारण जलवायु परिवर्तन की आशंका बढ़ती जा रही हैं, जो संपूर्ण मानव-जाति के अस्तित्व के लिए एक खतरे की घंटी है। इस प्रकार प्रदूषण हमारे जीवन के अधिकार, स्वास्थ्य के अधिकार को खंडित कर रहा है।
- आज समाज में अधिकांशतः गरीब एवं निरक्षर मजदूरों की संख्या ऐसी है, जो शिक्षा, पोषण एवं रोजगार के अभाव में जीवन जीने के लिए विवश हैं। मजदूरों का एक बड़ा वर्ग जो विभिन्न प्रकार से समाज एवं देश के निर्माण में योगदान देते हैं। लॉकडाउन में दिहाड़ी मजदूर, कंपनी एवं कारखानों में काम करने वाले मजदूरों को सबसे अधिक परेशानी का सामना करना पड़ा। उनका रोजगार छीन गया और वे बेरोजगार हो गए। ये वे ही मजदूर हैं जो दिन-रात मेहनत करते हैं लेकिन फिर भी उनके पास मूलभूत सुविधाओं का सर्वदा अभाव रहा हैं। इस भौतिकवादी युग में जो समाज के संपन्न वर्ग को सारी सुख-सुविधा उपलब्ध करती हैं वो स्वयं इस सुविधाओं के उपभोग से वंचित रह जाते हैं। इसी संदर्भ में मार्क्स ने कहा था कि, "विश्व के मजदूरों एक हो जाओ।"[8]

अधिकार एवं कर्तव्य के सामंजस्य में असफलता

यदि वैश्विक स्तर पर देखा जाएं तो रूस-यूक्रेन युद्ध एवं इजराइल-हमास युद्ध, भारत में मणिपुर हिंसा, हरियाणा के नूंह में हुए सांप्रदायिक हिंसा, दिल्ली के जंतर-मंतर पर महिला पहलवानों का प्रदर्शन, पश्चिम बंगाल के संदेशखली की घटना, मॉब लिंचिंग की घटनाएं, बिहार के मुजफ्फरपुर और तुरंत उस के पश्चात् उत्तर-प्रदेश के देवरिया में शेल्टर होम में बच्चियों के साथ हुए वीभत्स कृत्य देश में मानवाधिकार की धज्जियां उठाते हुए दिखाई पड़ती है। यदि पूर्व की घटनाओं पर चर्चा किया जाए तो कई विवादित घटनाएं मसलन आपरेशन ब्लू स्टार के बाद भारत में हुए दंगे, गुजरात में हिन्दू-मुस्लिम दंगे, बाबरी मस्जिद ध्वस्त होने के पश्चात् देश भर में हुए दंगे तथा ओर ना जाने ऐसे कई अनगिनत घटनाएँ है जिससे यह ज्ञात होता है कि मनुष्यों के अधिकारों का किस तरह से हनन हो रहा हैं।

परन्तु इसके अतिरिक्त भी अधिकार एवं कर्तव्य के सामंजस्य में असफलता के मुख्य कारण हैं—

- नैतिक मूल्यों का दिन-प्रतिदिन होता ह्रास।
- धर्माधता से उपजी असहिष्णुता की भावना एवं कट्टरपंथी विचारों का उत्थान तथा शासन एवं सत्ता पक्ष का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से मिलता समर्थन।
- सत्तारूढ़ शासकों द्वारा यथास्थिति बनाएं रखने के लिए योजनाबद्ध ढंग से जनसाधारण के मानवाधिकारों का हनन।

निष्कर्ष

उपयुक्त विवेचन के आधार पर यह ज्ञात होता हैं कि अधिकार एवं कर्तव्य परस्पर अन्योन्याश्रित हैं। अधिकार कर्तव्य का तथा कर्तव्य अधिकार का प्रतिबिम्ब मात्र होता हैं। एक के अभाव में दोनों का ही अस्तित्व समाप्त हो जाता हैं। विश्व में बढ़ती हुई ईर्ष्या, द्वेष, कलह, घृणा एवं असंतोष एकमात्र कारण हैं कि व्यक्ति अपने अधिकारों का तो उपभोग करना चाहते हैं लेकिन कर्तव्य पालन के प्रति उदासीन हैं। वस्तुतः सामाजिक जीवन को सुव्यवस्थित रूप प्रदान करने का एकमात्र उपाय यह हैं कि व्यक्ति पूर्ण निष्ठा के साथ कर्तव्य पालन करें। अतः यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि अधिकार एवं कर्तव्य के उचित सामंजस्य से 'भयमुक्त' वातावरण का निर्माण संभव हैं, जिससे महात्मा गाँधी का यह कथन स्वतः ही सिद्ध हो जाएगा कि—"आप केवल कर्तव्य का पालन कीजिए, अधिकार आपको स्वतः ही मिल जाएंगे।"[9]

संदर्भ सूची

1. राय, गाँधीजी, राजनीतिक शास्त्र के मूल सिद्धांत, भारती भवन, नई दिल्ली, पृ.सं. 87
2. जैन, पुखराज (डॉ.), राजनीति विज्ञान, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, पृ.सं. 106
3. कुमारी, सीमा, महिला अधिकार और भारतीय प्रावधान, उपकार प्रकाशन, आगरा, 2014, पृ.सं. 120
4. भारतीय राजव्यवस्था एवं प्रशासन, अरिहन्त पब्लिकेशन, मेरठ, 2023, पृ.सं. 34
5. अग्रवाल,ओ.एच., अंतराष्ट्रीय विधि एवं मानवधिकार, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन, दिल्ली, 2013, पृ.सं. 819
6. सिन्हा, पुष्पा, मानवाधिकार की असीमित सरहदें, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृ.सं. 16
7. विधि संवाद, त्रैमासिक पत्रिका, पृ.सं. 9
8. सिंह, प्रसाद बीरकेश्वर (डॉ.), राजनीतिक सिद्धांत, फेण्डस डिस्ट्रीब्यूटर्स, पटना, 1991, पृ.सं. 32
9. जैन, पुखराज (डॉ.), पूर्वोक्त, पृ.सं. 10
10. लक्ष्मीकांत, एम, भारत की राजव्यवस्था , ए.सी.ग्रो हिल एजुकेशन प्राइवेट, चेन्नई, 2014, पृ.सं. 735